IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

भारतीय नेपाली कवि जीवन थिङ के काव्यों में उन्मादरस

शिवकुमार नेपाल, एसोसिएट प्रोफेसर
नेपाली विभाग
सिक्किम सरकारी महाविद्यालय, नाम्ची
सिक्किम विश्वविद्यालय, भारत, 737126

शब्दकुञ्जी

भारतीय, नेपाली, काव्य, नवयुग, मनरोग, असामान्य मनविज्ञान, द्विध्रुवीय विकार, मनविकार स्थायीभाव, विषय तथा आश्रयआलंबन विभाव, वस्तु. चरित्र, परिवेश, कार्यअवस्था, अर्थप्रकृति, शब्दअर्थ सहभाव, उद्दीपन विभाव, अनुभाव, संचारीभाव, उन्मादरस, प्रतिपादन, सामान्यीकरण, परिपाक, रसअनुभूति।

सार

कवियों के द्वारा मनविकार (अनेक तरह के) काव्यों मे अंकित हो जाते हैं। सर्वसामान्यों को मनरञ्जन के साथ-साथ मनविकारों को साफ कर स्वस्थ, तंदुरुस्त तथा शिक्षित बनाने के लिए ही रससिद्धांत स्थापित है। मूलतः मनविकार भावविकार के कारण पैदा होते हैं। इसलिए यहाँ भारतीय नेपाली काव्यों में व्याप्त असामान्य मनविकार से निष्पन्न उन्मादरस के कुछ उदाहारण के साथ विशेष अध्ययन करने का प्रयास किया गया है।

1 विषय परिचय

काव्य का उद्भव, विकाश और अध्ययन स्वभाव से ही समयअनुरूप होता आ रहा है। समाज और काव्य भी परस्पर के आलंबन हैं। लोक में कुछ नयाँ हलचल देख्ते ही उस के साथ आकर्षित, एकान्वित, घुमिल और आलिङ्गित होना कविस्वभाव ही है। उस से संबद्ध भावों के साथ अन्तर्मन से बात करना, उस से चिपकना, उस से आत्मीय हो जाना आदि कवियों के प्राथमिक स्वभाव हैं।

असामान्य मनवैज्ञानिकों को मानें तो- शोषण, हिंसा (पीडा, बलात्कार आदि सहित), अभीष्ट-वियोग, अकेलापन, लाघुऔषध, चोट, दुर्घटना, दीर्घरोग, मद आदि असामान्य मनविकार के कारक होते हैं। कवि उन मूलभूत कारणों को स्वअनुभूत कर काव्यों में प्रयुक्त विषय, वस्तु, चरित्र आदि के माद्यम द्वारा व्यक्त करता है। मानवमन के गोप्य, अचेतन, अर्धचेतन तथा अन्य संभावित सङ्क्रमण के प्रतिक्रियाओं को प्रकाश में लाने का यथाशक्ति

प्रयास करता है। मानवमन के अवचेतन, स्वप्न, आकाङ्क्षा, त्रास, असंतुष्टि, पीड़ा, कुंठा, सङ्घर्ष, दोष, प्रतिक्रिया आदि के अनुभूतिगत गहिराईयों को सर्वसामान्यों में प्रकाशित करने का भरपुर प्रयास करता है। ऐसे काव्यों में विकृत मानवमन के प्रति सहानुभूति, समीक्षा, तर्क, द्वन्द्व आदि का संमिश्रण रहता है। अवस्था, परिवेश, देश, काल आदि अनुरूप असामान्य मनविज्ञान के मनचिकित्सक- समाजविरोधी व्यवहार, मानसिक असन्तुलन, अपर्याप्तता, सुझ बुझ रहित व्यवहार, मनज्ञान और आत्मसम्मान रहित व्यवहार, विघटित व्यक्तित्व, असुरक्षा का भाव, संवेगात्मक अपरिपक्वता, समाज अनुकूल क्षमताका अभाव, तनाव, अतिसंवेदनशीलता, पश्चात्ताप की अनुभूति न होना जैसे मानव व्यवहार को असामान्य मनविकार मानते हैं। (सिंह, पृ. 16)

गंदे स्थान पर बैठकर शहद संकलन करना मधुमक्खी का स्वभाव है। स्वच्छ स्थान पर बैठकर उसी को विषाक्त करना मक्खी का स्वभाव है। मक्खि प्रभृति मानसिकता से ही समाज में समस्याएँ अङ्कुरित होते हैं, बडते हैं, पुष्पित, पल्लवित होते हैं, विषाक्त विकार का विस्तार होता है। काव्य के द्वारा उक्त मक्खी स्वभाव के विकृतियों को मधुमक्खी स्वभाव के संस्कृति में परिणत करना कवि का मूल स्वभाव, प्रयोजन और उद्देश्य है। जैसे- *रामादिवत् प्रवर्तितव्यं, न तु रावणादिवत्* (रामआदि के जैसा व्यवहार हो, न कि रावणआदि के जैसा - विश्वनाथ)। मूलतः विषाक्त और अमृत प्रवृत्ति से ही व्यक्ति, परिवार, समाज, राज्य, देश और विश्व तक का छवि बनकर युगों तक रह जाता है। विनास या विकाश, अप्रतिष्ठा या प्रतिष्ठा, अगौरव या गौरव, बाधक या साधक जेसे पहचान बनकर सहीयैं रह जाता हैं। मधुमक्खी स्वभाव जहाँ हावी होता है, वहाँ के व्यक्ति से विश्व तक अधिक सुरक्षित, स्वस्थ, समृद्ध और प्रतिष्ठित होते हैं। मक्खी स्वभाव जहाँ हावी होता है, वहाँ उक्त व्यक्ति से विश्व तक भय, त्रास, असुरक्षा, गरीबी, कुंठा, विषाद आदि झेलकर असन्तुष्ट जीवन व्यतीत करने में वाध रहते हैं, इन कारणों से अगणित समस्याओं/ विकृतियों से समाज ग्रसित रहता है। ऐसे विकृत व्यवहारों से जनसामान्य में असामान्य मनविकार पैदा होता है, मन-बुद्धि पर घर बनाता है, लत लगता है, उसी का अधीन रह जाता है, मन-बुद्धि जो कराता है वही करता है। इसी तरह के असामान्य मनभावनाओं को असामान्य मनविकार कहा जाता है। काव्यों के वस्तु-चरित्र तथा परिवेशों के द्वारा कलात्मक रूप में जब उन मनभावनाएं अनायास उच्छलित होते हैं, वही **उन्मादरस** होता है।

भरतमुनि के अनुसार हृदयस्पर्शी वस्तुपदार्थों के भाव रस निष्पत्ति के कारण बनते हैं। सभी स्थायीभाव, सात्विक भाव, संचारी भाव रसनिष्पत्ति के कारण हैं। रस उन के कार्य या परिणाम हैं। उन के अनुसार नाट्य या काव्य के कवि इन के अलावा अन्य भावों के सहारे और अभिनय कुशलता के द्वारा रस परिपाक कर सकता है। व्यवहार में कोई भी नाट्य एक ही रसवाला नहीं होता। सभी भाव, प्रवृत्ति, धृति और रस एक ही तरह के नहीं होते। नाट्य में प्रयुक्त अनेक भावों में से एक को मूल भाव (रस) और अन्य को सहभाव या सहकारी भाव माननी होगी। अर्थात् काव्य में विविध भावों के द्वारा विविध रस निष्पन्न होते हैं। उन में से एक को रस और अन्य को भाव मानना होगा। रामचन्द्र शुक्ल आदि ने आशा, निराशा, पश्चात्ताप, कुंठा, संशय, धृष्टता, आश्चर्य, विश्वास, सन्तोष, असन्तोष, पटुता, मृदुलता, उदासीनता, अनिश्चय, अधैर्य, दया, कुशलता, सरलता आदि सञ्चारीभाव और प्रकृति, प्रक्षोभ जैसे रस प्रतिपादित की। (काले, पृ. 75) अतः उक्त भावों में से उन्माद को रस तथा विषाद, आवेग, अपस्मार, विस्मय, मद, मुर्च्छा, व्याधि, चिन्ता, दैन्य, भय, आलस्य, उग्रता, जुगुप्सा, शङ्का, शोक, असूया, श्रम, सुप्त, निद्रा, ग्लानि, जडता, मरण, उत्साह, क्रोध, चपलता, संमोह, अमर्ष,

स्वरभेद, कंपन, स्वेद, वैवर्ण्य को उन्मादरस के उत्पादक भाव मान सकते हैं। ईष्टजन के साथ वियोग, धन वैभव की हानी, धक्का या चोट, वात, पित्त, कफ के प्रकोप आदि विभाव (वस्तु-चरित्र) के द्वारा उन्माद की उत्पत्ति हो सकती है। अकारण हँसना, रोना, गाली देना, बड़बड़ाना, नीचे सोना, नीचे बैठना, उठ के चलना, भाग जाना, नाचना, गाना, पढ़ना, अचानक अपने शरीर में राख या मिट्टी लगाना, फेंके गए वस्तु, तिनके, चड़ाए गए फूल, फटे मैले कपड़े, मिट्टी के घडे आदि बटोरना और उन का उपयोग करना जैसे अनेक असामान्य अनुभावों के द्वारा इस (उन्माद) का अभिनय कर सकते हैं। (भरतमुनि, 422) अर्थात् काव्यों में इन में से किसी एक या अनेक भाव रहने से उन्मादरस उत्पन्न हो सकता है। रामचंद्र शुक्ल के अनुसार- उन्माद में रसयोग्यता हो सकता है। संचारीभाव के रूप में प्रचलित इस उन्माद में राग, शोक, भय क्रोध आदि अनेक भावों का भावदशा तथा स्थायी दशा के कारण हो सकते हैं। (शुक्ल, पृ.157) अर्थात् जब तक काव्यों में उन्माद गौण रूप में था, तब तक यह एक रस उत्पादक भाव था। लेकिन समय अनुरूप काव्यों में यह एक असामान्य मनविकार के सार रूप में व्याप्त हो गया है। इसी को मूल आधार बनाकर भी काव्य लिखे गए हैं। साथ ही स्थायीभाव, विभाव, अनुभाव तथा संचारी भावों के द्वारा रस परिपाक हो सकने की योग्यता भी दिखाई देता है। अतः उन्माद को रस मानना उचित ही लगता है।

चेतना के साथ जन्म से ही मनुष्य के अंतर्मन में रोदन-हँसी, दुख-सुख, गम-खुशी जैसे विकार निष्चल अवस्था में लिप्त रहते हैं। इन में धक्का लगने से बच्चा रोने या हंसने लगता है। मनुष्य जन्मजात उक्त दुख-सुख, रोदन-हँसी, अशांत-शान्त जैसे मनोद्वन्द्व के साथ इस संसार में आता है, और इसी के साथ इस संसार से चला जाता है। मनविकार इन्हीं अभिविकृति में नित्य लेकिन सुसुप्त अवस्था में रहने वाला भाव है। इस तरह का मनविचलन चेतन के साथ मनुष्य में हमेंशा रहता है। इसी का विकसित रूप ही मनविकार है। सामान्य मनवैज्ञानिकों का द्विध्रुवी विकार जिस में उन्माद-अवसाद बीच का धक्का-धक्की या उतार-चड़ाव होता है, वही असामान्य मनविकार में भी रहता है। इसलिए मनविकार मनुष्य के मनमें नित्य रहनेवाला स्थायी मनोभाव है। जब व्यक्ति असामान्य मानसिक दुनियाँ में विचरण करने लगता है, तो उसका परिणाम बहुत घातक भी हो सकता है। इस से बचाने में काव्य के अलावा शायद ही कोई सही रास्ता है। असामान्य मनविकार में आधारित काव्यों में वही सामान्य मनविकार असामान्य बन जाने से इस (मनविकार) को उन्मादरस का स्थायीभाव माना जाना उचित लगता है। असामान्य मनोद्वन्द्व को आधुनिक मनवैज्ञानिकों ने द्विध्रुवी विकार (बिपोलर डिसर्डर) कहा है। जिस में व्यक्ति की मनोदशा में उन्माद (मन को विकृत करने वाली उत्तेजना) और अवसाद नामक दो ध्रुवीय विकार का उतारचडाव होता रहता है।[१] असामान्य मनविकार उन उन्माद, अवसाद, विषाद आदि सभी प्रकार के द्वन्द्वों को मन्द, मध्य और मत्त रूप में प्रतिनिधित्व कर पाने की क्षमता रखता है। इन में से असामान्य मनविकार में मत्त मनविकार अधिक सक्रिय रहता है। इसलिए उन्मत्त मनविकार उन्मादरस का स्थायीभाव है।

काव्य से रस निष्पादन में संलग्न वस्तु-चरित्र आदि के कार्यव्यापार में महत्वपूर्ण सहकार्य कर के उसी (स्थायीभाव) में विलीन होने वाले भावों को अस्थायीभाव कहा जाता है। उन (वस्तु-चरित्र आदि) के

[१] https://www.medicoverhospitals.in/hi/diseases/bipolar-disorder/16/08/2023/239

कार्यअवस्थाएँ, अर्थप्रकृतियाँ, शब्दअर्थ सहभाव आदि में अस्थायी रूप में रहकर स्थायीभाव को जगाने में सहयोग करने वाले विभाव, अनुभाव या सात्विक भाव तथा संचारी भाव ही अस्थायीभाव हैं।

उन्माद के मूल कारणों को विषयआलंबन विभाव, उन विषयों के आश्रयों को आश्रयआलंबन विभाव तथा उन आलंबनों को जगानेवाले सहायक (परिवेश) भावों को उद्दीपन विभाव कहा जाता है। भरतमुनिद्वारा प्रतिपादित आठ सात्विक या अनुभाव उन्मादरस के भी अनुभाव बन सकते हैं। उन्माद को जगानें में स्तंभ (आड़) स्वेद (पसिना) रोमाञ्च, स्वरभंग (काकु) वेपथु (कंप) वैवर्ण्य (चेहरे का रङ्ग बदलना) अश्रु (आँसु) और प्रलय (स्तब्ध) जैसे सभी के सभी सात्विक भाव या विभाव सक्षम हैं। उन्मादरस निष्पादन के लिए वस्तु-चरित्रों को इन भावों का यथावत् अनुकार्य कराया जा सकता है। काव्य के वस्तु-चरित्रों से अचानक तेजी से भाषण देने, गीत गाने, बेचैन होने, नींद न आने, हर्षित होने उदास होने, हड़बड़ाहट, चिड़चिडापन, अत्यधिक ऊर्जा जैसे कार्यअवस्थाएँ भी उन्मादरस के विभाव रह सकते हैं।

मनविकार को जगाकर उसी में संमिलित होने वाले कुछ संचारी भाव इस प्रकार हैं। - विषाद, संवेग, आवेग, उद्वेग, वियोग, शोक, क्षोभ, क्रोध, दमन, विघ्न, विपत्ति, अमर्ष, कारुण्य, तिरस्कार, निराशा, संशय, धृष्टता, आश्चर्य, अविस्वास, विस्मरण, असंतुष्टि, उदासीनता, अनिश्चितता, अधैर्य, उत्साह, भय, जुगुप्सा, ग्लानि, शङ्का, असूया, श्रम, दैन्य, चिन्ता, अधैर्य, औत्सुक्य, आवेग, अपस्मार (मिर्गी) विवोध, (नींद से जगना) पाखण्ड, उग्रता, वेदना, त्रास, वितर्क (प्रतिवाद), आदि उन्माद के कारक भाव को इस रस के संचारीभाव मान सकते हैं। इन्हीं के संयुक्त सहकार्य या अपूर्व संयोग के द्वारा मनविकार उद्बुद्ध होकर उन्मादरस में परिणत होता है। इन्हीं समग्र भावों के द्वारा उन्मादरस निष्पन्न होता है।

2 भारतीय नेपाली काव्यों में उन्मादरस

भारतीय भाषाओं में हिन्दी के सुमित्रानंदन पंत, निर्मल वर्मा, जैनेन्द्र आदि अनेक काव्यकारों तथा नेपाली के जीवन थिङ, विकाश गोतामें जैसे अनेक काव्यकारों के द्वारा उन्मादरस प्रबल, औसतन तथा मन्द रूप में प्रवाहित पाया जाता है। आधुनिक कवि-कवयित्रीयों के काव्यों में भी विभिन्न विषयों से उत्पन्न उन्मादरस का प्रवाह पाया जाता है। विस्तारभय के कारण यहाँ सिक्किम के सशक्त कवि जीवन थिङ् के कविताओं में प्रवाहित उन्मादरस के कुछ नमुने इस शोधपत्र में समावेश रहेंगे।

सिक्किम के प्रतिभाशाली कवि जीवन थिङ सशरीर भले ही तरुणअवस्था (23 वर्ष) के प्रारंभ में ही दिवंगत हो गए। (19 दिसंबर 1955 को दक्षिण सिक्किम, नामची अस्पताल में जन्मे और 5 जुलाइ 1978 को पीजी अस्पताल कोलकाता में दिवंगत हुए) लेकिन उन के जीवित स्वरूप में उन की रचनाएँ युग-युगान्तर जीवित रहेंगे। उत्तरबङ्ग विश्वविद्यालय के होनहार छात्र रहे जीवन थिङ उसी समय से उत्तरप्रयोगवादी कविताएँ लिखते थे। उन के अन्दर का रूह कविताओं में अवतरित होते थे। उन के जीवनकाल में विविध पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित रचनाओं का संकलन श्याम प्रदर्स, दार्जिलिङ से सन् 1983 में 266 पृष्ठ का **साङ्लीभित्र बाँधिएका घोडाका टापहरू** [(जंजीरों में बंधे हुए घोडे के टाप) जिस में 12 कहानी, 1 समालोचना, 1 खण्डकाव्य (महाकाव्यवत 7 सर्ग लगभग पूर्ण), तथा 91 कविताएँ (5 गीत सहित)] कुल 105 रचनाएँ प्रकाशित हैं। उन

के अधिकतर कविताएँ तथा खण्डकाव्य (**नार्सिसस्**) में अपने स्वतंत्र देश सिक्किम भातर में विलय (सन् 1973) होने से जनसामान्यों में उच्छलित विक्षुब्द भावनाओं को स्वअनुभूत कर उन विक्षुब्ध अवस्थाओं के रूह को प्रयोगात्मक रूप में उतारा है। जैसे-

रजनीगन्धाको बास्ना मलाई (रजनीगंधा की वास्न मुझे)
आफ्नै शवयात्रामा जलाइएका अगरबत्तीको सुवास जस्तो लाग्छ (अपने ही शवयात्रा में जलाए गए अगरबत्ति की सुगंध जैसा लगता है)
भट्टी पसलबाट आएको गन्ध मलाई (भट्टी पसल से आए गन्ध मुझे)
आफ्नै जल्दै गरेको लाश जस्तो लाग्छ (खुद ही जलरहे लाश जैसा लगता है)
ल्याम्पपोस्ट सिङ्ग बोकेर म (पूरी ल्याम्प पोस्ट लेकर मैं)
गल्ली गल्ली डुलिहिँड्छु रातभरि (गल्ली गल्ली डोल/चल रहा हूँ रातभर।) -**मेरो शहर काँचो लाश जस्तै गह्नाउँछ** / मेरा शहर कच्ची लाश की तरह गंध आती है -पृ 71)

इस काव्यांश में सुगंध (स्वतंत्र देश की) और दुर्गंध (देश गुमने की) की अन्यमनस्कता या मनद्वन्द्व मनविकार है। देश विषयआलंबन विभाव है। कवि और सहृदयी आश्रयआलंबन विभाव हैं। अगरबत्ती की खुशबू को अपनी ही शवयात्रा की गंध लगना, भट्टी की गंध को अपनी ही लाश जैसा लगना आदि उद्दीपन विभाव हैं। स्तंभ, स्वेद (पसिना) रोमाञ्च, स्वरभंग (काकु) वेपथु (कंप) वैवर्ण्य (चेहरे का रङ्ग बदलना) और प्रलय (स्तब्ध) जैसे सात्विक भाव या विभाव हैं। इन सब भावों के संयुक्त सहकार्यों से उन्मादरस निष्पन्न हुआ है।

कवि जीवन थिङ की **युग** नामक कविता में देश में युग परिवर्तन के समय जनसामान्य में अनुभूत होने वाले भावुक स्थिति को इस तरह असामान्य मनविकार चित्रित है-

निकै बिहान उठेर (बहुत सबेरे उठकर)
सड़कभरि पाइला पोख्तै पोख्तै (सडक भर कदम गिरा-गिराकर)
आँखाले हिमाल समेटेर (आँखों से हिमाल समेटकर)
म सर्वाङ्ग शीत बन्ने बन्ने स्थितिमा थिएँ (मैं सर्वांग शीत बनने-बनने स्थिति में था)
मेरो छेवैबाट युग झोंक्किएर गयो (मेरे बगल से ही युग गुस्साकर चला गया)
मेरो छेवैबाट उ खल्तीमा हात हालेर (मेरे बगल से ही वह जेब में हाथ डालकर)
मलाई रातो आँखाले रिस पोखाएर गयो (मुझे लाल आँख से गुस्सा गिराकर गया)
धेरै पर पुगेर उसले मलाई फर्केर हे-यो र फेरि (बहुत दूर पहुँचकर मुझे लौटकर देखा और फिर)
मलाई नपर्खी फुइँफुइँती गयो (मुझे इंतजार किए बिना फटाफट गया)
म पछिबाट नांगो रोएँ (मै फीछे से गड्गा रोया)
म किन-किन निधार ठोक्दै पत्थर भएर रोएँ। (मैं न जाने क्यों माथा पीटकर पत्थर बनकर रोया) (युग -पृष्ठ 75)

इस कविता में युग और मैं (पात्र) विगत (स्थिति) और वर्तमान (स्थिति) जैसे द्विध्रुवी विकार होने से असामान्य मनविकार स्थायीभाव है। देश विषयआलंबन विभाव है। कवि तथा सहृदयी आश्रयआलंबन विभाव हैं। देश गुम होने की दयनीय स्थितियाँ उद्दीपन विभाव हैं। गुस्से से कवी को देखकर युग का चले जाना आदि अनुभाव हैं। दया, करुणा, दैन्य, चिन्ता, अमर्ष आदि संचारीभाव हैं। इन सब के संयुक्त सहकार्य या सहभाव से सहृदयी के हृदयों का मनविकार जागृत होकर उन्मादरस में परिणत हुआ है।

उस देश, काल, परिवेश के विक्षुब्ध मानसिकता वाले अनुभूतियों को स्वअनुभूति के द्वारा **बिजोक भएर मरेछन् आकाश र सडक** (बेहाल बनकर मर गए थे आकाश और सड़क) नामक कविता में असामान्य मनविकार जागृत होकर इस तरह उन्मादरस परिपाक हुआ है। जैसे-

आजकल साँच्चै आकाश कुहिएर सिनो भएको छ (आजकल सच्ची आकाश सड़कर (सिनो)हो गया है)

म कोपर्दछु यो सड़कलाई (मैं खरोचता हूँ इस सडक को)

मेरा नङहरूमा उप्केरा आउँछन् (मेरे नाखूनों में पपड़ी जाते हैं)

गलिसकेका मासुहरू, लुम्साहरू (सड़े हुए मांस, लंबे टुकड़े/ लुंसा- long slices of meat)

साँच्चै बिजोक भएर मरेछन्- आकाश र सड़क (सच ही बेहाल होकर मर गए- आकास और सड़क)

गर्भावस्थामा नै मरेछ आखाश र सडक (गर्भअवस्था में ही मर गया आकास और सड़क -पृ. 79)

इस पद्य में असामान्य मानसिकता हुबहु अनुकीर्तित है। जिस के कारँ उन्मादरस परिपक्व बना है। मातृभूमि विषयआलंबन विभाव है। कवि तथा सहृदयी आश्रयआलंबन विभाव हैं। मानसिक पीड़ाएँ उद्दीपन विभाव हैं। विषाद, संवेग, विक्षोभ, आवेग, उद्वेग, दमन, विघ्न, विपत्ति, अमर्ष, कारुण्य, तिरस्कार, निराशा, संशय, धृष्टता, अविस्वास, असंतुष्टि, उदासीनता, अनिश्चितता, अधैर्य, भय, जुगुप्सा, ग्लानि, शङ्का, असूया, श्रम, दैन्य, चिंता, वेदना, त्रास, प्रतिवाद आदि संचारी हैं। इन्हीं के अपूर्व संयोग के द्वारा इस पद्य में कुंठा उद्बुद्ध होकर उन्मादरस में परिणत हुआ है। इस तरह पंत की इस *संदेश* कविता में उन्मादरस परिपाक हुआ है।

जीवन थिङ की नार्सिसस ((एक मनोरोगी का विश्वप्रसिद्ध ग्रीक मिथ, जो (सागरदेव-अपसरापुत्र) अपने ही सुंदरता तथा प्रेम में मोहित होकर तालाब में अपने चेहरे को देखते-देखते डूबकर मर गए) काव्य में इस तरह उन्मादरस परिपाक हुआ है- *म नार्सिसस हुँदैछु* (मैं नार्सिसस हो रहा हूँ)

फूलमा नार्सिसस हुँदैछु (फूल में नार्सिसस हो रहा हूँ)

रंगमा गहिरिएर म नासिसस् हुँदैछु (रंग में गहराकर मैं नार्सिसस हो रहा हूँ)

अँध्यारोमा छटपटिएर नासिसस् हुँदैछु (अंधकार छटपटाकर नार्सिसस हो रहा हूँ)

बेलुकीको घाममा म नासिसस् हुँदैछु (शाम के घाम में मैं नार्सिसस हो रहा हूँ)

विहानको रूखो आकाशमा म नासिसस् हुँदैछु (सुबह के रूखे घाम में मैं नार्सिसस हो रहा हूँ)

देउराली भएर रोकिंदै उठेको बतास (देवस्थान होकर रुकते हुए उठआहुआ हवा)

आउन अब मेरो आत्मा (आओ अब मेरी आतमा)

म तिम्रो शव हूँ पर्खेर बसेको छु (मैं तुंहारा शव हूँ प्रतीक्षारत हूँ)

मलाई पनि रातो सिंदूर चाहिएको छ (मुझे भी रक्त सिंदूर की जरूरत है)

मलाई टिप्नु पातका डोलीमा (मुझे उठा लेना पत्तों की डोली में)

मलाई एक मुठी अपनत्व चाहिएको छ (मुझे एक मुट्ठी अपनत्व की चाहत है) -पृ 233-234

इस पद्य में म/देश/माता विषयआलंबन विभाव है। संतान/ कवि/ जनता/ सहृदयी/ प्रापक/ भावक आश्रयआलंबन विभाव है। मैं (मातृभूमि/ सिक्किम) डेफोनियल/ गुणकेसरी फूल के रंग में गहराकर, अंधकार में छटपटा कर, शाम के घाम में, भोर की रूखी आकाश में, नार्सिसस होता जाना, देवराली होकर रुक-रुक कर मातृभूमि की शव की आत्मा की प्रतीक्षा करना, मुझे (मातृभूमि को) भी लाल सिंदूर की चाह होना/ सधवा की

चह होना, उन को भी पत्तियों की डोली टिपने के लिए, एक मुठी अपनत्व की चाह होना आदि उद्दीपन विभाव हैं। उन्माद, कुंठा, आवेग, क्षोभ, उद्वेग, वितर्क (प्रतिवाद) आक्रोश, भय, निर्वेद (वैराग्य) ग्लानि, शङ्का, दैन्य (पीडा) चिन्ता, अधैर्य, व्रीडा (लाज) जडता (शिथिलता) विषाद, व्याधि (वेदना) त्रास, स्तम्भ (स्थीरता) विवर्णता (मुहार का रंग बदलना) आँसु, प्रलय (अतिदुःख के कारण मूर्छित होना) पश्चात्ताप, असन्तोष, मृदुलता, उदासीनता, अनिश्चितता, दया, सरलता आदि व्यभिचारीभावों के संयुक्त कार्यव्यापारद्वारा असामान्य मनविकार उद्बुद्ध/जागृत होकर उन्मादरस परिपाक हुआ है।

जीवन थिङ के प्रायः काव्य मूलतः नार्सिसस की ही केन्द्रीयता में परिलक्षित दिखाई देते हैं, असामान्य मनविकार में केन्द्रित दिखाई देते हैं।

3 निष्कर्ष

परापूर्वकाल से आजतक तिलस्म/ माया, विस्मय, नीति, युद्ध, वीरता, भक्ति, प्रकृति, प्रगति, मनज्ञान, समन्वय और अब मनविकार तथा मृत्यु के काव्य का विकास हुआ है। जब तक मनविकार तथा मृत्यु से संबन्धित काव्य अमान्य थे अथवा नकारात्मक दृष्टिकोण से ही देखा जाता था। तब तक ऐसे काव्य विमर्षरहित अथवा अल्प विमर्षित थे। मनरञ्जन के साथ-साथ मनविकारों को साफ कर स्वस्थ, तंदुरुस्त तथा शिक्षित समाज निर्माण करना काव्य का मूल लक्ष रहता है। इसी तरह असामान्य मनविकारों के कव्य उन उन्मादों के विविध कारणों (वस्तुओं) या गतिविधियों से छुटकारा पाने के पर्याप्त सामर्थ्य रखते हैं। इसलिए एसे काव्यों के भी समान रूप से विमर्ष होना आवश्यक है।

मृत्यु भी जीवन का सब से बडा सत्य में से एक है। अनादि काल का माया (तिलस्म, स्वप्न, मोह) हो, आत्म-परमात्म की एकात्मता (अद्वैत) हो, शुन्य (बुद्धत्व) हो या ईश्वरअंश (हिग्ज्-बोसोन का गड पार्टिकल्स्) हो या गुणसूत्र (क्रोमोजोम) सबका संबन्ध कहीं न कहीं आत्मा-भाव से जुडे हैं। हमारे भारी भरकम भौतिक शरीर को चलाने वाला एक एकदम हलका सा सूक्षम शरीर (मन) यानी अदृश्य शक्ति ही है। यह मन तेजी के मामले में सर्वश्रेष्ठ है। बुद्धि/ ज्ञान का संबन्ध भी भौतिक शरीर से कयी गुना ज्यादा मन से ही है। इसी मन-बुद्धि बीच के व्यापार को भाव कहा जाता है। इस भाव का आधारभूमि वस्तु है। वस्तु सृष्टि के स्थूल तथा सूक्षम दोनों स्वरूप में मौजूद है। मन-बुद्धि यानी सूक्षम प्रकृति ही स्थूल प्रकृति (वस्तु) के संपर्क में आने से भावका व्यापार, संचार या व्यभिचार जैसे मनविचलन आरंभ होते हैं। इसी (भाव) का परिपक्व अवस्थाओं को रस कहा जाता है। उन असंख्य वस्तुओं में से आवश्यकता अनुरूप मन-बुद्धि से भाव निकलते हैं। इन्हीं भावों के संयुक्त सहकार्य से निकला हुआ सार ही रस है। अतः उन भावों का केंद्र, भावसमूहों या भावों के सर्वोच्च स्वरूप का नाम ही रस है।

काव्य भावप्रधान कला है और यह (काव्य) हमेशा मानव समाज के अधीन है। भौतिक सुख-सुविधामूलक जीवन के अपर्याप्ति या असंतुष्टि के कारण जीवन में ललितकला संमिलित हुआ। भौतिक जीवन से कयी गुणा ज्यादा मानसिक जीवन से ही सुख या संतुष्टि मिलती है। मानसिक जीवन की संपूर्णता केवल काव्य ही दे सकती है। इसलिए काव्यअनुभूति, काव्य साधना तथा काव्यरचना को समाज का सबोच्च कार्य माना जाता

है। काव्य मनुष्य जीवन से अभिन्न और परस्पर के परिपूरक हैं। दोनों एक दुसरे के आलंबन हैं। यह संसार जितना विचित्र है उतना ही सौन्दर्यपूर्ण है। स्वभाव से ही मनुष्य सौंदर्यप्रिय है। कवि उसी सौंदर्यों से आकर्षित होता है, एकान्वित होता है, उस से संबद्ध भावों के साथ अंतर्मन से बात करता है। समाज उत्थान के बाधक विषाक्त प्रवृत्ति के लोगों को 'राम आदि के जैसा व्यवहार करना न कि रावण आदि के जैसा' जैसे अनुभूतियां देकर अपने और अपनों के जीवन धन्य बनाने के लिए उन वाहरी और आंतरिक सौंदर्यों को हृदयंगम कर, अपने कविकर्म के रूप में अपने को काव्यरूप में प्रकाशित करता है, स्थापित करता है। केवल बाहर देखे गए खुबसूरत चीजें ही सौंदर्य नहीं है। जिस तरह विविध कड़वे, विषाक्त पदार्थों से भी जीवन बचाने वाले अमृत यानी दवाईयाँ बनते हैं, उसी तरह कविद्वारा समाज के उन विषाक्त मनस्थितियों के समाज के बाधक, घातक, प्रदूषक सभी पक्ष समन्वित रूपमें मन्थन कर मानसिक स्वास्थ्य के अमृत (रस) को सर्वसामान्य में सार्वजनिक करता है, इसलिए कि सभी जीवन स्वस्थ, समृद्ध और दीर्घजीवी बनें।

समाज स्वभाव से ही असभ्य से सभ्यता की ओर, अज्ञान से ज्ञान की ओर और स्थूल से सूक्षम की ओर जाता है। लेकिन आज समय स्वभाव विपरीत/ प्रकृति विपरीत दिशा और दशा (भयंकर शंकट) की ओर जा रहा है। मानव का मूल धर्म मानवता शंकट में है। अपने पराए हो रहे हैं। माता-पिता और बड़ों के प्रति न इज्जत है न सम्मान। बच्चों के प्रति न संस्कार देने का समय है न शिक्षा। केवल डिग्रियां दे पा रहे हैं। विश्वबाजारीकरण सब से बड़ा खतरा बना हुआ है। इन सब के साथ मन या अध्यात्म साधना के अभाव में लोक अशान्त, चिंतित, कुंठित बनता जा रहा है। भौतिक रूप में दिव्य, भव्य, नव्य, सभ्य, समृद्ध दिखेने वाले लोक भी किसी न किसी रूप में चिंतित, कुंठित, असुरक्षित अनुभूत कर रहा है। कोई सबकुछ होकर चिन्तित है। कोई सबकुछ खोकर चिंतित है। कोई कुछ न होकर चिन्तित है। इन्हीं कारणों से लोक दिन प्रतिदिन कुंठा, अवसाद, विषाद, उन्माद से पीड़ित हैं। मनोरोगी हैं। जीवन का सब से प्रिय प्राप्ति मन की शांति/ संतुष्टि है, जिस का अकाल आज है। यह सामान्य समस्या नहीं है।

काव्य व्यक्ति से विश्व तक को भावनात्मक रूप से प्रबल बनाने में सामर्थ्य इसलिए रखता है कि वह भावप्रधान कला/ विद्या है। साथ ही रसात्मक काव्य में वह रसायन होते हैं कि किसी भी तरह के लोक उसके अंदर तक जाकर रूबरू होता है, द्रवीभूत होता है और अपने समस्याओं से मुक्त होने के साहे द्वार खोल देता है। मुक्ति (समस्याओं से) की अनुभूति खुद करता है। इसलिए परम्परागत रसों से भिन्न रस के आधार पर असामान्य मनविकार के काव्य का अध्ययन इस शोधपत्र में किया गया है।

उन्माद पूर्णतया नयी रस नहीं है। भरतमुनि ने इस को रस के उत्पादक भाव के रूप में व्याख्या किया है। लेकिन उन के अनुसार समय, परिस्थिति, योग्यता, स्तरीयता आदि के आधार पर उन भावों को रस मान सकते हैं। उन्माद भाव से उन्मादरस होने का मानक ही काव्य में स्थायीभाव के साथ विभाव (वस्तु-चरित्र के) अनुभाव (सहृदयी/ सर्वसामान्य के) और संचारीभाव (रस उत्पादक भाव) का रहना है। स्थायीभाव का मतलब ही नित्य रहने वाला भाव है। जन्म से ही व्यक्ति अपने चेतना में दुख-सुख, गम-खुशी जैसे द्विध्रुवी मनविकार के साथ आता है। ये सामान्य मनविकार ही अधिक आघात पहुँचने के कारण असामान्य बन जाने से इस 'मनविकार' को उन्मादरस का स्थायीभाव माना जाना उचित ही है।

स्थायीभाव को जगाकर रस में परिणत करने के लिए विभाव, अनुभाव और संचारीभाव जैसे अस्थायीभाव का मूल भूमिका रहता है। विभाव का मतलब किसी वस्तु से भाव/ अर्थ निकलना है, अथवा काव्य के वस्तु-चरित्र, इन के कार्यअवस्थाएं और अर्थप्रकृतियों के द्वारा सहृदयी रूबरू होना है। काव्य के वस्तु-चरित्र के विषयगत आलंबन विषयआलंबन है। उसी विषय से आश्रित चरित्र, कवि, सहृदयी में से कोई एक या अनेक आश्रयआलंबन हैं। उन आलंबनों को उद्दीप्त करनेवाले परिवेशगत भाव उद्दीपन विभाव है। उन विभावों के द्वारा किए जाने वाले अनुभूति जन्य भाव या उन (विभाव) के बाद आने वाले भाव अनुभाव है। इन विभाव तथा अनुभाव को उद्बुद्ध करके स्थायीभाव में ही संमिलित होने के लिए आने वाले भाव संचारी भाव हैं। इन सब के संयुक्त सहकार्य से होने वाले अपूर्व सुखानुभूति को रस कहा जाता है। उन्मादरस भी करुण, वीभत्स, भयानक रस जैसा ही अपूर्व सुखानुभूति है।

उपर बताया गया है कि समयअनुसार लोक चलता है, बदलता है और लोक के अनुसार काव्य लिखे जाते हैं। समय सदैव परिवर्तनशील है और आज पर्याप्त काव्यों में उन्माद अनुकीर्तित है। नामवर सिंह ने सुमित्रानंदन पंत की *संदेश* कविता में अनुकीर्तित कुंठा, अवसाद, घुटन भी सुंदर लगने की बात कही गई है। वैसे तो उन्हों ने कविता के नये मानक के संदर्भ में भाव के अलावा भी कविता सुंदर लगने की बात सिद्ध करने के लिए कहा हो, लेकिन शब्द, सौंदर्य/ अलंकार, प्रतीक, विंब, मिथक, रीति, ध्वनि, वक्रोक्ति, औचित्य आदि काव्य के अंग तो हैं ही। इन सभी के सहकार्य से अनुकीर्तित वस्तुओं, चरित्रों, वाह्यआंतरिक परिवेशों के समग्रता से निष्पन्न होने से रस ही काव्य की संपूर्णता है, अंगी है, और वे सब रसस्वरूपी शरीर के अंग हैं।

भरतमुनि ने स्पष्ट उल्लेख किया है कि काव्य दुःखितों, पीड़ितों, थकितों को विश्रान्ति, मनरञ्जन तथा उपयोगी समयकटनी तथा दुःखों से मुक्ति देने के साथ साथ नकार न सकने वाला मधुर ज्ञान देने के लिए नाट्य या काव्य लिखे जाते है। इसी तरह विश्वनाथ अनुसार काव्य के द्वारा राम आदि के भाव से प्रवृत्त होने और रावण आदि के भाव से निवृत्त होने के लिए ही काव्य लिखे जाते हैं। अर्थात सामान्य मानवजीवन को उपर उठाने के लिए या सकारात्मक मार्गदर्शन देने के लिए काव्य लिखे जाते हैं।

स्वस्थ रहने के लिए मन को साफ रखना अनिवार्य है। लोग अपनी मनकी बात किसी को कहने में हिचकते हैं, कतराते हैं, डरते हैं, लजाते हैं, हीनता बोध करते हैं या किसी को भरोसा नहीं करते हैं। इन्हीं स्वभावों से उनके भाव मन में ऐंठन या घुटन बनकर रह जाते हैं, जिस का परिणाम बहुत बुरा या खतरनाक भी हो सकते हैं। इन के गहिराईयों तक जाकर उसे निःसंकोच उच्छलन देनें में केवल कविकर्म या काव्य ही हिम्मत रख पाता है। इसी के कारण उन खतरों से बचा पाता है। उन नकारात्मकता से होने वाले दुष्परिणाम के चरम उत्कर्षों को सर्वसामान्यों के सामने रखकर उन से लड़ने, उभरने या मुक्त होने का मार्गदर्शन मन ही मन इस तरह सहृदयीयों के मन में गड़ जाता है, कि वह (प्रापक) चाहकर भी कभी उसे भूल नहीं सकता। सतर्क तो वो हो ही जाता है, उन उन्माद भरे काव्यों के दिग्दर्शन से व्यवहार में भी पीड़ितों, असहायों, अवहेलितों से सहृदयता भी मन में गढ़ जाता है। इसलिए मनविकृत काव्यों के सदुपयोगिता को अमल में लाना आवश्यक है।

भारतीय संविधान से मान्यता प्राप्त भाषाओं में हिन्दी के हरिवंशराय वच्चन, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', बाङ्ला के रविन्द्रनाथ ठाकुर, ऊर्दू के गुल्जार, नेपाली के अगम सिंह गिरी, हरिभक्त कटुवाल आदि के काव्यों में असामान्य मनोदशा झलकते हैं। लेकिन हिंदी के सुमित्रानंदन पंत, निर्मल वर्मा, जैनेन्द्र तथा नेपाली के जीवन थिङ, विकाश गोतामे जैसे अनेक प्रतिष्ठित कवियों के काव्यों में उन्मादरस का प्रबल प्रवाह पाया जाता है। उत्तरआधुनिक नव कवि-कवयित्रीयों के काव्यों में तो इसका भरमार ही है। लेकिन यहां स्थायीभाव, विभाव, अनुभाव तथा संचारी भावों से उन्मादरस सिद्ध करने के संदर्भ में मात्र एकाध उदाहारण देना संभव हुआ है।

सन्दर्भ-सूची

आनन्दवर्धन, सन् 1952, *ध्वन्यालोक*, विश्वेश्वर (सं) दिल्लीः गौतम बुक डिपो।

इंटरनेशनल रिसर्च जर्नल अफ मेनेजमेंट & ह्युमेनिटिज, वल्युम 14, इस्यु 8 & 9, वर्ष 2023।

उपाध्याय, बलदेव, सन् 1985, *भारतीय साहित्य अनुशीलन*, वाराणसीः शारदा संस्थान।

एस्थर व जेरी हिक्स, सन् 2017, *द ल अफ एट्रेक्शन*, नयां दिल्लीः प्रभात पेपरबैक्स।

कविराज, गोपीनाथ, सन् 1969, *मन के उस पार*, वाराणसीः विमल प्रकाशन ट्रस्ट।

काले,मनोहर,सन् 1963,*आधुनिक हिन्दी-मराठी में काव्य-शास्त्रीय अध्ययन*, मुम्बईः हिन्दी ग्रन्थ प्रा.लि।

कुन्तक, वि.सं 2012, *वक्रोकितिजीवित*, नगेन्द्र और विश्वेश्वर, (सं) दिल्लीः दिल्ली विश्वविद्यालय।

गुप्त, अभिनव, सन् 1971, *अभिनवभारती*, मधुसुधन शास्त्री, (सं) वाराणसीः बनारस हिन्दु वि.वि.।

गोयन्का, हरिदास, वि.सं 2052, *ईशादि नौ उपनिषद्*, गोरखपुरः गाताप्रेस।

जर्नल अफ एडभांस्ड एंड स्कलर्लि रिसर्चर्स इन एलाइड एड्युकेशन/ मल्टिडिसिप्लिनेरी एकाडमिक रिसर्च वल्युमः 12/ इस्युः 2 , 01 जनवरी 2017।

जैन, निर्मला, सन्, 1999, *रस सिद्धान्त और सौन्दर्यशास्त्र*, नयाँ दिल्लीः वाणी प्रकाशन।

नगेन्द्र, (सन् 1995) *रस सिद्धान्त*, नयाँ दिल्ली, नेशनल पब्लिशिंग हाउस।

नेपाल, शिवकुमार, सन् 2016, *प्रबन्धकाव्य-परिचय सहित महाराणा प्रताप महाकाव्यको संरचना विश्लेषण*, सिलिगुढीः, ग्राफिक प्रिण्टर्स एण्ड पव्लिकेसनस्।

नेपाल, खेमराज, सन् 2003, *नेपाली लोक साहित्यको रूपरेखा*, दिल्लीः साहित्य अकादेमी।

नेपाल, घनश्याम, सन् 1994, *कविता सागर*, गान्तोकः जनपक्ष प्रकाशन। (सिक्किम)

फारूकी, नीलोफर तौसीस, एफ.बी, आइ.जी-राइटिनोफर, जून 2023।

बुचर,एस.एच.सन् 1998, *एरिस्टोटल्स् थ्योरी अफ पोएट्री एन्ड् फाइन् आर्ट्स्*, नयाँ दिल्लीःकल्याणी पब्।

भरतमुनि, सन् 2017, *नाट्यशास्त्र*, बाबुलाल शुक्ल, (सं) वाराणसीः चौखम्बा संस्कृत संस्थान।

भानुदत्त, सन् 1974, *रसतरङ्गिणी*, गोपालदास जोशी र देवदत्त कौशिक (सं), दिल्लीः मुंसीराम प्रालि।

भामह, वि सं 2021, *काव्यालङ्कार*. देवेन्द्रनाथ शर्मा (सम्पा) पटनाः बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्।

भोज, सन् 1934, *सरस्वती कण्ठाभरण*, मुम्बईः निर्णयसागर प्रेस।

मम्मट, सन् 1998, *काव्यप्रकाश*, विश्वेश्वर (सं), वाराणसीः ज्ञानमण्डल लिमिटेड।

मर्फी, जोसेफ, सन् 2013, *आपके अवचेतन मन की शक्ति*, सुधीर दीक्षित (अनु,) भुपालः मंजुल पब.हा

माधवाचार्य,सन् 1984, *सर्वदर्शन सङ्ग्रह*, उमाशङ्कर शर्मा, (सं), वाराणसीः चौखम्बा संस्कृत ग्रन्थमाला।

राजशेखर, वि सं 2011, *काव्यमीमांसा*, केदारनाथ शर्मा (सं), पटनाः बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्।

विद्याधर, सन् 1903, *एकावली*, मुम्बईः राजकीय ग्रन्थशाला।

विद्यानाथ, सन् 1914, *प्रतापरुद्रीय*, मद्रासः एस चन्द्रशेखर, बालमनोरमा प्रेस।

शारदातनय, सन् 1983, *भावप्रकाशनम्*, मदनमोहन अग्रवाल, (सं) वाराणसीः चौखंबा सुरभारती प्र.।

शुक्ल, रामचन्द्र, सन् 2008, *रस मीमांसा*, जसपुर, अनु प्रकाशन, पृ 157-158।

सिंह, अरुणकुमार, सन् 2021, *आधुनिक असामान्य मनविज्ञान*, दिल्ली, मोतीलाल ब.दा प.हा.।

सिंह, नामवर, सन् 2018, *कविता के नए प्रतिमान*, नई दिल्ली, राजकमल प्रकाशन।